हिन्दी महिला उपन्यास साहित्य और स्त्री सशक्तिकरण

डॉ० मुख्तार अहमद गुलगुंदी
सहा0 अध्या0
हिन्दी विभाग, कर्नाटक कला महाविद्यालय, धारवाड
ई–मेल–mukhtarhindi786@gmail.com

सारांश

स्त्री–सशक्तिकरण आजकल बहुचर्चित विषय रहा है। पूर्व स्त्री के मुकाबले आज की स्त्री अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करना जानती है, अपने अस्तित्व की रक्षा, अपने मान–सम्मान की रक्षा करना जानती है और उसके लिए जी–जान से प्रयत्नशील है। सरकार के द्वारा भी स्त्री–सशक्तिकरण के लिए कई योजनाओं का अनुष्ठान किया गया है। जिसके फलस्वरूप स्त्री को स्वातंत्र्य, घुटन से आजादी, उस पर हो रहे शोषणों– हिंसा, भेदभाव की समाप्ति, कन्या शिशु संबंधी भेदभाव आदि को मिटाकर अपने अस्तित्व को पायी है और स्त्री–सशक्तिकरण के कारण उनको हर क्षेत्र में मौका मिला है और प्रगति प्राप्त की है। हिंदी साहित्य में महिलाओं के पदार्पण से स्त्री–सशक्तिकरण की ध्वनि गूँजने लगी। प्रारंभिक रचनाओं में स्त्री की स्वतंत्रता के स्वर प्रबल हो रहे हैं। परिवार में शोषण से घुटती रही स्त्री ने आज परिवार से लोहा लेते हुए सम्मानजनक स्थान प्राप्त किया है। सरकारें भी इसके लिए विपुल अवसर प्रदान कर रहीं है। इस दिशा में हिन्दी महिला कथाकार अपनी सर्वश्रेष्ठ रचनाओं के माध्यम से प्रचुर मात्रा में योगदान दे रही हैं। स्त्री–सशक्तिकरण के इस विशिष्ट स्वरूप की विचारधारा को कथाकारों ने कितनी गंभीरता से लिया है यही इस आलेख का विषय रहा है। यह कहना असंगत न होगा कि अभिव्यक्ति का परिणाम साहित्य ही उसके निजी जीवन का दस्तावेज है। अतः स्त्री–सशक्तिकरण के संदर्भ में उसके विचारों का जायजा उसकी तूलिका से निःसृत हिन्दी उपन्यासों के माध्यम से लेना अधिक औचित्यपूर्ण होगा। इस आलेख में मृदुला गर्ग का 'कठ गुलाब' (१९९६), प्रभा खेतान का 'छिन्नमस्ता', वीणा सिन्हा का 'पथप्रज्ञा', मैत्रेयी पुष्पा का 'चाक' (१९९७), 'इदन्नमम' (१९९५) एवं चित्रा मुद्गल का 'आवाँ' (१९९६) पर मात्र विचार किया जायेगा। आलोच्य उपन्यासों की लगभग सभी स्त्री पात्र देह दोहन को निरस्त करती हुई अपनी अस्मिता की रक्षा का प्रयत्न करती हैं। और कुछ मात्र जीवन का अतिंम लक्ष्य न मानकर समाजसेवा के लिए आत्मोत्सर्ग करती हैं या दूसरे स्वस्थ विकल्प ढूँढ़ लेती हैं। लेखिकाओं ने इन उपन्यासों के द्वारा पुरुष वर्चस्व, पुरुष सत्ता के छद्म आदि से स्त्री समाज को सतर्क करती हुई उसे सबला बनाने स्वावलंबन का आलोक प्रज्वलित कराने का प्रयास किया हैं जो वस्तुतः स्तुत्यार्ह है। यह नयी चेतना, नया वैचारिक आयाम मानव कल्याण का सुखद संकेत है।

स्त्री सशक्तिकरण की चर्चा आजकल बहुत अधिक मात्रा में की जा रही है। क्योंकि आज के संदर्भ में मात्र इसकी आवश्यकता नहीं पड़ी है, आद्यंत इसकी आवश्यकता आन पड़ी थी। परंतु पुरुष प्रधान समाज की मानसिकता इसके विरुद्ध रहने के कारण यह संभव नहीं हो सका था। लेकिन आज की परिस्थितियाँ इसके अनुकूल विपुल मात्रा में अवसर प्रदान करती हैं। जो परिस्थितियाँ स्त्री के साथ प्रारंभ से उसके विपरीत चली आयी थीं, वे अब प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। उस समय की स्त्री में और अब की स्त्री में बड़ा अंतर पाया जाता है। आज की स्त्री अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करना जानती है, अपने अस्तित्व की रक्षा, अपने मान–सम्मान की रक्षा करना जानती है और उसके लिए जी–जान से प्रयत्नशील है। जिसके कारण पुरुष प्रधान मानसिकता को अपने अनुकूल बनाने की दिशा में अग्रसर होती जा रही है। हिन्दी साहित्य महिलाओं के पदार्पण से स्त्री सशक्तिकरण की ध्वनि गूँजने लगी है। प्रारंभिक रचनाओं में स्त्री की स्वतंत्रता के स्वर प्रबल रहे हैं परिवार में शोषण से घुटती रही स्त्री आज परिवार से लोहा लेते हुए सम्मानजनक स्थान प्राप्त कर रही है। सरकारें भी इसके लिए विपुल अवसर प्रदान कर रही हैं। इस दिशा में हिन्दी महिला कथाकार अपनी सर्वश्रेष्ठ रचनाओं के माध्यम से प्रचुर मात्रा में योगदान दे रही हैं।

इसी दिशा के तहत जब पूर्वी वर्लिन में 'अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस' सन् 1975 में मनाया गया, तब उसके एवज में भारत सरकार ने सन् 2000–2001 ई० को 'स्त्री सशक्तिकरण वर्ष' कहकर घोषित किया। इस दिशा में केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकारों ने अनेक कार्यक्रमों की योजनाएँ तैयार कीं। इनमें विशेष रूप में लिंग समानता एवं स्त्री के प्रति न्यायपूर्ण नीति को अधिक महत्व दिया गया। उसका विकास, प्रगति तथा सशक्तिकरण कालमिति क्रिया योजनाओं को रूपायित किया गया। कार्यक्रमों के अनुष्ठान की निगरानी के लिए राष्ट्र तथा राज्य स्तरीय गुटों की रचना की गयी है। राष्ट्रस्तर के गुट के लिए प्रधानमंत्री तथा राज्य स्तरों के गुट के लिए मुख्यमंत्री अध्यक्ष होते हैं। 1997 में स्त्री सशक्तिकरण समिति की रचना हुई।

यही नहीं गैर सरकारी संस्थाएँ भी इस दिशा में काम कर रही हैं। लिंग भेद विविध स्वरूप का रहा है। फिर भी बीते दो एक दशकों से विशेष रूप से घटती जा रही स्त्रियों की संख्या चिंताजनक विषय बनती जा रही है। अगर यही स्थिति बनी रहेगी तो एक दिन स्त्री–विहीन समाज मात्र शेष रहेगा। अतः इस समस्या के समाधान के लिए सरकार ने स्त्री सशक्तिकरण की कुछ योजनाएँ तैयार की हैं, वे हैं – मानव अधिकार तथा मूलभूत स्वातंत्रय, स्त्री के साथ हो रही हिंसा का निर्मलन, स्त्री संबंधी भेदभाव की समाप्ति, कन्या शिशु संबंधी भेदभाव औन उनके अधिकारों के उल्लंघन का निर्मूलन (जन्म से पूर्व ही लिंग का चयन और कन्या शिशु की भ्रूण हत्या, बाल विवाह, कन्याओं का दुरुपयोग, बाल वेश्यालयों के विरुद्ध कानूनों को परिणामपूर्वक जारी करना), स्त्री सशक्तिकरण (उनका स्वास्थ्य, शिक्षा, वृत्ति कौशल, उद्योग, कमाई के अवसर, तकनीकी सेवाएँ, भूमि तथा इतर नमूने की संपत्ति, ऋण, बाजार आदि को मुक्त और संपूर्ण रूप में उपलब्ध कराना, स्त्री सशक्तिकरण की उद्देश्य पूर्ति के लिए हर स्तर पर निर्णय लेने में स्त्री को अवसर, स्त्री एवं विकास क्रिया, स्त्रियों के विवादों को सूक्ष्मीकरण (Sensitisation of

Women's issues) अर्थात् उनकी समस्याओं के प्रति विशेष रूप में प्रायोजित और अर्थ सुरक्षायुक्त कार्यक्रमों का आयोजन करना, उदाहरण गैर सरकारी तथा सार्वजनिक क्षेत्रों में प्रशिक्षण कार्यक्रम)।

स्त्री सशक्तिकरण के इस विशिष्ट स्वरूप की विचाराधारा को कथाकारों ने कितनी गंभीरता से लिया है, यही इस आलेख का विषय रहा है। देश स्वतंत्र हुये एक लम्बा अरसा बीत गया। स्वतंत्र देश में स्त्रियाँ कितनी स्वतंत्र रही हैं ? अपने स्वातंत्रय का कितना उपयोग कर रही हैं ? कैसे कर रही हैं ? आदि सवालों के जवाब में उसकी अभिव्यक्ति स्वातंत्रय का भी उल्लेख करना विशेष महत्व रखता है। यह कहना असंगत न होगा कि अभिव्यक्ति का परिणाम साहित्य ही उसके निजी जीवन का दस्तावेज है। अतः स्त्री सशक्तिकरण के संदर्भ में उसके विचारों का जायजा उसकी तूलिका से निःसृत हिन्दी उपन्यासों के माध्यम से लेना अधिक औचित्यपूर्ण होगा। इस आलेख में मृदुला गर्ग का 'कठ गुलाब' (1996), प्रभा खेतान का 'छिन्नमस्ता', वीणा सिन्हा का 'पथप्रज्ञा', मैत्रेयी पुष्पा का 'चाक' (1997), 'इदन्नमम्' (1995) एवं चित्रा मुदग्ल का 'आवाँ' (1999) पर मात्र विचार किया जायेगा।

आज का 'गे' कल्चर, समलिंगी समस्या, स्पर्म बैंक, सरोगेटेड मदर (किराये की माँ), ह्यूमन क्लोनिगं जैसी संभावनाएँ, अत्याधुनिक वैज्ञानिक आविष्कार आदि ने स्त्री विमर्ष को नया आयाम दिया है साथ ही भयभीत कराने वाले अनेक प्रश्न मानव मन को सता रहे हैं। ह्यूमन क्लोनिंग तथा स्पर्म बैंक कहीं पारंपरिक वैवाहिक व्यवस्था का तो खंडित नहीं कर देंगे ? सुरक्षित पारिवारिक व्यवस्था का क्या होगा ? कहीं ये संभावनाएँ सुरक्षित सामाजिक परंपरा के सर्वनाश के लिए नांदी गीत तो नहीं बन रही है ? मृदुला गर्ग जी ने 'कठ गुलाब' द्वारा इन विषयों के प्रति निश्चित अभिप्राय देने की दिशा में पहल की है। 'कठ गुलाब' (wood rose) सृजन का प्रतीक है। लेखिका ने इसी अर्थ में संपूर्ण उपन्यास को प्रतीकात्मक बना दिया है। कथावाचकों के रूप में चार प्रमुख स्त्री पात्रों (स्मिता, मारियन, नर्मदा, असीमा) और एक मात्र पुरुष पात्र विपिन के द्वारा कथा का ताना बाना बुना गया हैं कथा नायिका स्मिता पालनहार माता–पिता के देहांत के पश्चात दीदी नमिता के घर आश्रय लेती है। आश्रयदाता जीजा आश्रय का मूल्य बलात्कार के द्वारा पा लेता है। तब पढ़ाई के बहाने दीदी उसे बडौदा भेज देती है। परिश्रमी स्मिता आत्मनिर्भर बन अमेरिका जाती है। अमेरिका के मनोचिकित्सक जिस जारविस से शादी कर के भी पीडित प्रताडित होती है। स्मिता सहिष्णुता का बांध टूटने पर अदालत जाती है। लेकिन अदालत में उसे अर्धविक्षिप्त करार दिया जाता है और चोट से गर्भस्थ शिशु खो देती है। अंत में तलाक लेकर दिल्ली लौट आती है। दिल्ली में सहेली 'असीमा', बहन की पुत्री 'नीरजा' और दीदी नमिता की नौकरानी 'नर्मदा' से मुलाकात होती है और साहित्य, दर्शन, इतिहास, राजनीति, मनोविज्ञान के ज्ञाता बहुविज्ञ विपिन से निकट संपर्क स्थापित होता है। इन सभी पात्रों के वैचारिक आदान–प्रदान, इनसे जुड़ना–टूटना होते होते उसका व्यक्तितव विकसित होता है। साथ ही अपने निकट रहने वालों के विकास में वह सहायक भी होती है। इस क्रम में स्त्री पुरुष संबंधों के अन्यान्य पहलू उद्घाटित होते जाते हैं। अंत में कठगुलाब का सपना संजोये गुजरात के गोधड़ के अभियान में

शामिल होकर दुर्बलों की सेविका 'बा' (माँ) बन जाती है। समूचे उपन्यास में सारे प्रमुख पात्र अपने अपने तरीके से सृजन (मातृत्व) रूपी कठगुलाब उगाने की कोशिश तो करते हैं, किंतु कठफोडवा (कीडा जो कठगुलाब नष्ट करता है – प्रतीक कामीपुरुष) उसे खा जाता है। स्मिता, मारियल (अमेरिकन मेधावी स्त्री) के जीवन को जारविस और इरविन जैसे कठफोडवा भोगते हैं, गर्भस्थ शिशु के नष्ट होने का कारण बनते हैं।

विपिन कठगुलाब उगाना चाहता है लेकिन उसे नीरजा रूपी बंजर मिलती है। असीमा, स्मिता, नीरजा, मारियन, नर्मदा सब संतानापेक्षी हैं। लेकिन किसी न किसी कारण से संतान सृजन में विफल होने पर नर्मदा यदि दुर्बल बच्चों की माँ बनती है और आर्थिक स्वावलंबन पाकर आत्मनिर्भर, सम्मानजनक स्वस्थ विकल्प को अपना लेती है। मारियल उपन्यास सृजन दुबारा करती है। असीमा, स्मिता, विपिन गुजरात के पिछले गोधड में 'कुटुंब' की स्थापना करते हैं। सक्षमता इस प्रकार सब अपने अपने तरीके से सृजन रूपी कठगुलाब उगाते हैं। आत्मनिर्भर तथा समाजोन्मुखी विकास ढूँढ़ते स्त्री की सशक्षता को सिद्ध करती है। उपन्यास में पाँच पंखुड़ियाँ अर्थात् पांच खंड हैं। पांच पात्रों के नाम से जुडे पांचों अध्यायों को स्त्री मुक्ति के पांच द्वार के रूप में चित्रित किया गया है। कठगुलाब को नारी जीवन की निरर्थकता, विवशता, असफलता आदि के प्रतीक रूप में भी प्रयोग किया गया है।

स्त्री सशक्तिकरण के विश्लेषण से दो प्रमुख अंश उभरकर आते हैं, एक है सेक्स अथवा देह मुक्ति, और दूसरा स्त्री मुक्ति। आज मीडिया और वैश्वीकरण के तहत स्त्री के सौंदर्य, देह और श्रम को वस्तु की भांति उपयेाग किया जा रहा है। डॉ० सत्यदेव त्रिपाठी जी के विमर्शानुसार इस कृति को मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास मान लेंगे तो उपन्यास के स्त्री–पुरुष संबंधों की गहराई–चौड़ाई का नग्न दर्शन होता है। उदाहरण है एक संवाद; ''क्या औरत मर्द से सिर्फ इसलिए आकर्षित होती है कि वह उसे बच्चा दे सकता है। अगर औरत मर्द के बिना, स्पर्श द्वारा, बच्चा पैदा कर सके, तो क्या औरत मर्द के बीच का आकर्षण समाप्त हो जायेगा...।'' किंतु विपिन की बातों में इन स्थूल संबंधों से परे एक विशिष्ट सत्य का साक्षात्कार होता है। वह कहता है – ''ऐसे जीवन का कोई मूल्य नहीं जिसमें निस्वार्थ, निष्कलुष प्रेम का एक क्षण भी न रहा हो।'' इस रचना में आने वाले स्त्री पात्रों की विद्रोही मनोवृत्ति वैयक्तिक जीवन से मात्र संबंधित है। फिर भी इस संघर्ष की महत्ता कम नहीं है। बांझ नीरजा को सांत्वना देते विपिन की बातें महत्वपूर्ण हैं। उसका मानना है – 'संतान पैदा न कर पाने से कोई बंजर नही हो सकता और बहुत कुछ है जिसका सृजन हम कर सकते हैं।'' लेखिका जीवन के लिए पूरक उपयोगी हर कार्य को सृजन की संज्ञा देती है। यह स्वस्थ दृष्टिकोण लेखिका की विशिष्ट रचनात्मक उपलब्धि है।

प्रभा खेतान शोषणमुक्त नारी जीवन की पक्षधर है। उनका उपन्यास 'छिन्नमस्ता' स्त्री की दुर्भाग्यपूर्ण नियति को घोषित करता है। वह मस्तक रहित अर्थात् बुद्धि रहित जीव, देह मात्र है। पुरुष सत्तात्मक व्यवस्था में बुद्धिहीन नारी ही वांछनीय है। प्रभुता उसकी बुद्धिशक्ति को छिन्न भिन्न कराती आयी है। आधुनिक नारी प्रिया प्रतिभा संपन्न होने के कारण परिवार से दंडित होकर निर्वासित होती है। वह पत्नी से लेकर माँ तक की सारी भूमिकाएँ निभाती है और पढ़ी–लिखी

होने के कारण पति नरेन्द्र के व्यवसाय में हाथ बंटाती है। नौकरी करते हुए परिवार को खुश रखती है। लेकिन पति की प्रभुता उसकी विदेश यात्रा को स्थगित करने की कोशिश करती है। प्रिया इस लक्ष्मण रेखा का उल्लंघन करती है तो माँ और पति के घर और मारवाडी समाज से निष्कासित होती है। प्रिया अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए पारिवारिक संबंधों को तोड़ते हुए परंपरागत मूल्यों का विरोध कर दमन नीति का विद्रोह करती है, साथ ही दूसरों को भी इस दिशा में प्रेरित करती है। छिन्नमस्ता परंपरागत स्त्री के मिथ को तोडता है। यह उत्तर आधुनिक कालीन स्त्री का अन्याय के विरोध में उठाया गया साहसिक कदम है।

नारी उत्पीडन का और एक चेहरा वीणा सिन्हा का उपन्यास 'पथ प्रज्ञा' से उजागर होता है। यह स्मृति सम्मान प्राप्त रचना है। इसमें आध्यात्मिक ऊँचाइयों को छूते रहे प्रागैतिहासिक काल की विडंबना को आईना दिखाया गया हैं मेधावी, अनुपम सौंदर्यवती, कलाकुशल चार चक्रवर्ती पुत्रों को जन्म देने की क्षमता संपन्न राजकुमारी माधवी का पुरुष सत्ता द्वारा मनमाना दोहन होता है।

विश्वामित्र का आत्मीय शिष्य गालव मित्र सुपर्ण की सलाह से स्वयं एक आश्रम निर्मित करना चाहता है। अतः गुरु विश्वामित्र का आश्रम छोड़कर जाने से पूर्व गुरुदक्षिणा देना चाहता है। गुरु की मनाही के बावजूद अति आग्रह करने पर विश्वामित्र असंभव गुरुदक्षिणा के रूप में आठ सौ श्वेतवर्ण श्यामकर्ण अश्वों की मांग करते हैं, ताकि गालव आश्रम छोडकर न जाये। लेकिन गालव और सुपर्ण दोनों मिलकर राजा ययाती से आठ सौ अश्व पाना चाहते हैं। लेकिन ययाती उनके बदले चार चक्रवर्ती पुत्रों को जन्म देने की क्षमता संपन्न, फिर भी कन्यत्व की पवित्रता बनी रहने का वर प्राप्त पुत्री माधवी को उन्हें देता है। गालव भोजनगर के राजा उशीनर, अयोध्या के राजा हयश्रव, काशी के राजा दिवोदास को क्रमशः सौंपकर उनको एकेक चक्रवर्ती संतान दिलवाकर उनसे दो–दो सौ अश्व पाता है। अंत में बचे दो सौ अश्वों के लिए ऋषि विश्वामित्र के पास ही लिवा लाता है। तब विश्वामित्र कहते हैं – ''... यह अनुपम रत्न लेकर तुम व्यर्थ भटकते रहे। इन अश्वों का इस सौंदर्य के आगे कोई मूल्य नहीं। यदि तुम पहले ही इसे यहाँ ले आते तो निश्चित जानों इसके चारों पुत्रों का पिता मैं ही होता।'' जो ऋषिश्रेष्ठ की भी भोगलोलुपता का प्रमाण है। विश्वामित्र से एक पुत्र को जन्म देने पर उसे पुनः पिता के पास छोड दिया जाता है। तब पिता माधवी का स्वयंवर रचते हैं। स्वयंवर में माधवी अपने जीवन के इतिहास को उपस्थित राजाओं के सम्मुख उद्‌घाटित करती है। उसकी जीवन कहानी सुनकर भी कई राजा लार टपकाते हैं। तो अंत में स्वार्थी संबंधों की परवाह किये बिना स्वयंवर के द्वंद को भेदती हुई अंतरंग प्रेरणा से आलोकित प्रज्ञा पथ पर वह चल पड़ती है। अपनी समूची ऊर्जा और ज्ञान को सर्वजन हित हेतु समर्पित करने का संकल्प कर शोषण, पीड़ा, देह दोहन से मुक्ति मार्ग खोल लेती है। माधवी का यह निर्णय आज के संदर्भ में भी अधिक प्रासंगिक है। नारी जागृति की रचनाकार की अभिलाषा में सफलता निहित है।

मैत्रेयी पुष्पा का 'चाक' और 'इदन्नमम्' उपन्यास स्त्री सशक्तिकरण के नये पहलुओं से साक्षात्कार कराते हैं। 'चाक' उपन्यास की नायिका सारंग नैनी ब्रज के अंचल के अतरपुर गाँव

के कृषक परिवार की साधारण पढ़ी–लिखी युवती है। सारंग के जीवन में भी कई उतार–चढ़ाव आते हैं। वह पति को चुनौती देती है। प्रेमी को अपनाती है। अंत में अतरपुर की सारी स्त्रियाँ मतभेद भुलाकर इकट्ठी होती हैं समन्वित स्त्री शक्ति के सहारे गांव के प्रधान पद के चुनाव में प्रत्याशी बनती है। इस प्रकार स्त्री संगठन की शक्ति के परिणाम को दर्शाने वाली यह रचना लेखिका के लक्ष्य पूर्ति के 'चाक' में रूपायित होती जाती है। मैत्रेयी पुष्पा का उपन्यास 'इदन्नमम्' कई पुरस्कारों से सम्मानित है। बंगलौर की शाश्वती संस्था द्वारा 'नंजरगूडु तिरुमलांबा' पुरस्कार (1995 में), उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा 'प्रेमचंद सम्मान' (1996 में) एवं मध्यप्रदेश साहित्य परिषद द्वारा 'वीरसिंह देव' आदि पुरस्कार प्राप्त हैं। डॉ० निर्मला जैन का कथन है – 'वस्तुतः यह उपन्यास औरत होने की लडाई का उपन्यास है, वही उसकी सफलता और पठनीयता का कारण भी है।' प्रस्तुत उपन्यास औरत होने की लडाई का उपन्यास है, वही उसकी सफलता और पठनीयता का कारण भी है।' प्रस्तुत उपन्यास में तीन पीढ़ी की नारी की संघर्ष गाथा है। मंदा की दादी–बहू, दादी की बहू–प्रेम बहु और प्रेम बहू की पुत्री मंदा।

तीनों अपने अपने ढंग से पुरुष प्रधान व्यवस्था में कष्ट झेलती हुई अपनी लड़ाई हुई खुद लडती मुक्त हो जाती हैं। इसमें बुंदेलखंड के दो गावों–श्यामली और सोनपुरा के लोक जीवन की कथा है। कथा की शुरुआत सोनपुरा छोडकर श्यामली की ओर सफर करती हुई मंदा और उसकी दादी बऊ के चित्रण के साथ होती है। गाँव छोड़ने का कारण है, बऊ का पुत्र (मंदा के पिता) सोनपुरा में अस्पताल खुलवाना चाहता था और अस्पताल उद्घाटन के समय उसकी हत्या हो जाती है। मंदा की विधवा माँ प्रेम बहू कुछ दिन बाद अपने बहनोई रतन यादव के साथ भाग जाती है। रतन यादव मंदा की जायदाद हडपने के लिए प्रेम बहू को हथियार के रूप में इस्तेमाल करता है। प्रेम बहू के माध्यम से नाबालिग मंदा से वसीयत पर दस्तखत करवाने की कोशिश करने लगता है। तब मंदा की दादी बऊ पोती मंदा को सुरक्षित रखने के लिए अपना गांव छोड़कर श्यामली में अपने दूर के रिश्तेदार दादा पंचमसिंह के पास ले जाती है। रतन यादव के आदमी वहाँ भी पीछे पड़ने के कारण बऊ अपनी मंदा को अज्ञात रखती है। इसीलिए श्यामली में भी छिपकर रहना अनिवार्य होता है। दादा पंचमसिंह तो अति निस्वार्थी भद्रपुरुष है। लेकिन उसका भाई काकाजू सहानुभूति और सहायता की आड में मंदा के अिपता की सारी जायदाद हडप लेता है। बचपन से ही मुसीबतें और कष्टों से घिरी हुई मंदा बालिग हो अपनी लडाई खुद लडने का निर्णय लेती है और सोनपुरा लौट आती है। तत्पश्चात् उसकी विचारधारा में प्रौढ़ता आती जाती है और व्यष्टि वेदना से घिरी मंदा समष्टि वेदना से स्पंदित होने लगती है। और अंत में समष्टि हित की लड़ाई में अपने व्यक्तित्व को समर्पित कर देती है।

इस उपन्यास की नायिका के रूप में संघर्ष मंदाकिनी की कहानी 'या देवी सर्वभूतेषु, शक्तिरूपेण संस्थिता' के रूप में संघर्ष की प्रेरणा देती है। कथा नायिका मंदा अपनी दादी के लिए 'बावरी सिरिन' है तो अभिलाख जैसे शोषकों के लिए 'काल भैरवी' है। सरकारी तंत्र के लोग मंदा को 'महाकाली' का संबोधन देते हैं। 'महाराज' उसे 'रानी लक्ष्मीबाई' की तरह हौसले वाली मानते हैं और मोदिन जैसी ग्रामीण महिलाओं के लिए 'उसका मन दर्पण या साफ' है।

इस तरह औरत होने की लड़ाई केवल वैयक्तित्क न रहकर समष्टि हित में परिणत होना वस्तुतः स्त्री शक्ति की क्षमता से पाठक को रूबरू कराता है।

श्रमजीवी तथा नारी शोषण की महागाथा है चित्रा मृदुला का उपन्यास 'आवाँ'। अर्थ मानव जीवन को नियंत्रित करने वाला प्रमुख तत्व है। अर्थ प्राप्ति के प्रयत्नों में स्त्री को कभी देह दोहन को विवश होकर सहना पड़ता है। पर मजदूर संगठन, राजनीतिक दांवपेच, नेताओं की आपसी होड आदि में फंसकर पिसते श्रमिकों और स्त्रियों की कहानी है। कथा नायिका नमिता पांडे का अन्नासाहेब की हत्या की खबर सुनकर गर्भपात होता है तो धनबल पर पापड बेलकर आजीविका कमाने वाली नमिता की कोख खरीदने का, निःसंतान संजय कनोई का षड्यंत्र विफल होता है तब वह निर्लज्जता से अपनी ही संतान पाने की इच्छा को यह कहते हुए अभिव्यक्त करता है – ''....मैं रंडियों से बाप बनना नहीं चाहता था...मुझे नहीं गंवारा था ऐसी किराये की कोख''। नमिता को संजय के इस अपमानजनक षड्यंत्र का पता चलने पर उससे प्राप्त ऐशो आराम को धिक्कार कर अभाव भरी जिंदगी जीने लगती है। भविष्य में अपने शरीर का शोषण होने नहीं देती। नमिता तथा मजदूर नेता पवार शादी करना चाहते हैं। पवार भी नमिता के इस्तेमाल से नेतृत्व रूपी अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति करना चाहता है तो वह उसे भी ठुकरा देती है। बार बार के मोहभंग से सबक सीखी नमिता अपनी अस्मिता को बनाये रखने के लिए श्रमिक परिवेश में शरण लेती है। इस प्रकार ''मध्यवर्गीय परिवार की देहरी से निकलकर निम्नवर्गीय झोंपड़ियों से संपर्क साधती है और अपने परिश्रम तथा प्रतिभा से उचचतम वर्ग की विश्वस्त और अंतरंग पात्र बन जाती है। लेकिन जब वह पहचान लेती है कि हर जगह पाखंड और धम्म का वर्चस्व है तो सभी को चुनौती देती हुई अपना गंतव्य मार्ग स्वयं चुनती है।''

उपरोक्त अध्ययन से यह विदित होता है कि महिला उपन्यासकारों ने अपनी इन रचनाओं के माध्यम से स्त्री सशक्तिकरण की दिशा में स्त्री को जागृत करने का विशेष प्रयास किया है। आलोच्य उपन्यासों की लगभग सभी स्त्री पात्र देह दोहन को निरस्त करती हुई अपनी अस्मिता की रक्षा का प्रयत्न करती है और कुछ मात्र जीवन को अंतिम लक्ष्य न मानकर समाजसेवा के लिए आत्मोत्सर्ग करती हैं या दूसरे स्वस्थ विकल्प ढूँढ़ लेती हैं। लेखिकाओं ने इन उपन्यासों के द्वारा पुरुष वर्चस्व, पुरुष सत्ता के छद्म आदि से स्त्री समाज को सतर्क करते हुये उसे सबला बनाने, स्वावलंबन का आलोक प्रज्वलित कराने का प्रयास किया है जो वस्तुतः स्तुत्यार्ह है। यह नयी चेतना, नया वैचारिक आयाम मानव कल्याण का सुखद संकेत है।

संदभ ग्रंथ

1. मृदुला गर्ग–*कठगुलाब*, **140–141**
2. मृदुला गर्ग–*कठगुलाब*
3. वीणा सिन्हा–*पथ प्रज्ञा*, **147**
4. डॉ० वीरेन्द्र सक्सेना–*स्त्री सशक्तिकरण के विविध आयाम*, डॉ० ऋणभदेव शर्मा – लेखिकाओं द्वारा लिखे उपन्यासों की नयी रचना दृष्टि लेख से – पृ०सं०–**7**